आखर हिंदी पत्रिका ; e-ISSN-2583-0597 खंड 4/अंक 1/मार्च 2024
Received: 11/03/2024; Accepted: 14/03/2024; Published: 24/03/2024

# दलितों के प्रति सामाजिक रवैया

- **केसरबेन राजपुरोहित**
अतिथि व्याख्याता, हिंदी विभाग
कन्नूर विश्वविद्यालय
मों. 9207433926
ई मेल- kesarclt@gmail.com

केसरबेन राजपुरोहित, **दलितों के प्रति सामाजिक रवैया**, आखर हिंदी पत्रिका, खंड 4/अंक 1/मार्च 2024,(54-58)

## शोध सार

हर व्यक्ति को अपनी मर्जी के अनुसार रोजगार चुनने का और खुशी से जीवनयापन करने का अधिकार है। समाज में एक वर्ग जिसे सवर्ण कहा जाता है के द्वारा दूसरे वर्ग जिसे अवर्ण या अछूत कहा जाता है का जाति के नाम पर ये अधिकार छिनना कतई न्यायोचित नहीं हो सकता। ओम प्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ' के माध्यम से लेखक ने बताया है कि किस तरह चौधरी जैसे लोग दलितों के भरोसे का फायदा उठाते हैं। सूरजपाल चौहान की कहानी 'साजिश' के जरिए सवर्णो की नीति का पर्दाफाश किया है कि वे किस तरह से दलितों को आगे बढ़ते हुए राह में ही रोक देना चाहते हैं। इंदिरा परमार की कहानी 'वैतरणी' में देख सकते है कि पानी की एक-एक बूंद के लिए तरसने वाले दलितों को दरखास्त लिखकर देने को कहा जाता है। लेकिन पंडित जी के आँगन में ही तुरंत चापाकल लगवाने के लिए किसी दरकी जरुरत नहीं। कुसुम मेघवाल की कहानी 'अंगारा' में हरखू की बेटी जमुना का अपहरण करके उसका बलात्कार किया जाता है। लेकिन पुलिस रिश्वत लेकर दोषियों के खिलाफ रिपोर्ट नहीं लिखती है। गाँववालों को भी गवाही न देने के लिए धमकी दी जाती है। क्योंकि वह एक दलित लड़की थी। सामाजिक रवैये मे बदलाव आयेगा तभी दलितों के साथ हो रही प्रताडना से उन्हें मुक्ति मिलेगी।

## उद्देश्य

समाज में परिवर्तन की चेतना आवश्यक है। आम जनता तक अपने अधिकारों के प्रति सजगता की लहर पहुँचाने की कोशिश करने की जरुरत है। हर किसी को अपनी रुचि और काबिलियत के अनुसार काम करने की आज़ादी है। समाज को समदृष्टि से देखना आवश्यक है। दलित स्त्रियों के प्रति समाज का रवैया आदरभरा होना चाहिए। व्यक्ति कर्मो से महान बनता है। धर्म के नाम पर हो रहे अन्याय से समाज को बचाना है। दवितों की तकलीफ़ों को समझकर उन्हें दूर करने की सोच विकसित की जानी चाहिए। समाज की द्रष्टि संकुचित नहीं बल्कि उदार होनी चाहिए।

**प्रस्तावना**

मनुस्मृति के रचनाकार ने लिखा है-

"शकेनाषी हि शूद्रेण न कार्यो धन संचय।

शूद्रोंहि धनमा सांध ब्राह्मानेव बाधते।।

अर्थात् धनोपार्जन में समर्थ होकर भी शूद्र को धन संग्रह नहीं करना चाहिए। क्योंकि धन प्राप्त कर वह ब्राह्मों को पीड़ित करने लगता है।"[1] समय के साथ बदलाव की बात की जाती है। लेकिन कुछ रुढ़ियों से हम इस कदर चिपके रहते है कि उनमें परिवर्तन होने से हमे खतरा नज़र आता है। इसीलिए सदियों से चलती आ रही परंपराओं को निभाते जाने में ही अपना हित महसूस करते है। फिर चाहे किसी के साथ अन्याय ही क्यो न हो रहा हो। ये तो मानवता नहीं हो सकती। वर्तमान समय में जब दुनिया एक छोटा सा गाँव बन गई है। अगर ऐसी ही सोच को लेकर चलेंगे तो न तो स्वयं का विकास कर पायेंगे न ही समाज उन्नति कर पायेगा। जाति के नाम पर व्यक्ति को आगे न बढ़ने दिया जाए तो यह कितना बड़ा अन्याय होगा उस व्यक्ति विशेष के साथ जिसमें सारी काबिलियत होते हुए भी सिर्फ जाति की वजह से सीमित बना रहे। यही पर जरुरत है सामाजिक सोच को बदलने की। सोच बदलेगी तभी तो रवैये में भी बदलाव आयेगा।

ओम प्रकाश वाल्मीकि की कहानी 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ' के माध्यम से लेखक समाज में व्याप्त अमानवीयता का चहेरा दिखाने में सफल रहे हैं। कहानी के नायक संदीप को शहर में नौकरी मिल गई है। उसे अपनी पहली तनख्वाह मिलती है। जिसे लेकर वह गाँव अपने माता-पिता से मिलने आता है। तब उसे अपने बचपन के दिन याद आते हैं। जब बचपन में वह पच्चीस चौका सौ पहाडा दोहराता था तब उसके पिताजी डाँटकर कहते थे कि पच्चीस चौका डेढ़ सौ होते हैं। पिता के कहे अनुसार जब वह दूसरे दिन स्कूल में पहाड़ा दोहराता है तो उसे मास्टर जी से डाँट पडती है। पिताजी को वह समझाने की कोशिश करता है लेकिन वे अपनी बात पर ही अटके हुए थे। क्योंकि पिताजी किताबों से ज्यादा यकीन चौधरी पर करते थे। उनकी नजर में चौधरी भले और इज्जतदार आदमी है। जो कभी झूठ नहीं बोलेंगे। पिता जी के शब्दों में "तेरी किताब में गलत बी तो हो सके...नहीं तो क्या चौधरी झूठ बोल्लेंगे? तेरी किताब से कहीं ठाडु (बड़े) आदमी है चौधरी जी। वह तेरा जो हेडमास्टर है वो बी पाँव छुए है चौधरी जी के। फेर भला वो ग़लत बतावेंगे...मास्टर से कहणा सही-सही पढ़ाया करे...।" [2] यहा एक भोलोभाले ग्रामीण व्यक्ति का विश्वास देख सकते है। जो स्कूल के मास्टर जी से भी अधिक

भरोसा चौधरी जी पर करता है। लेकिन उस चौधरी जी का क्या जिन्हें इस भलमनसी की कोई परवाह ही नहीं? सालो पहले संदीप की माँ बीमार हो गई थी। उसके इलाज का खर्चा सौ रुपये हुआ था। जो चौधरी जी ने ही दिए थे। उन्होंने सौ रुपये पर हर महीने पच्चीस रुपया ब्याज रखा। चार महिने में पच्चीस चौका डेढ़ सौ ब्याज बताया। लेकिन उसे घर का आदमी समझकर बीस रुपये माफ कर दिए और एक सौ तीस रुपये चुकाने के लिए कहा। जिससे पिता चौधरी जी के प्रति बड़े शुक्रगुजार और एहसानमंद थे। संदीप अपनी तनख्वाह के पैसों से पच्चीस-पच्चीस रुपये की चार ढेरियाँ लगाकर पिता को गिनने के लिए कहता है। तब पिता को यकिन होता है कि पच्चीस चौका डेढ़ सौ नहीं बल्कि सौ होते हैं। उन्हें विश्वास नहीं हो रहा था। वे बार-बार गिनते हैं। उन्हें भारी पीड़ा का अनुभव होता है।

सूरजपाल चौहान की कहानी 'साजिश' का नायक नथ्थू बैंक से लोन लेकर ट्रांसपोर्ट का व्यवसाय करना चाहता है। वह बी.ए पास है। बैंक का मैनेजर उसे पिगरी लोन का फॉर्म भरने की सलाह देता है। नथ्थू सूअर पालने का काम नहीं करना चाहता। मैनेजर उसे समझाता है कि कल्याण जाटव का लड़का श्याम बी.ए पास है। उसने बैंक से लोन लेकर चमड़े के व्यापार को आगे बढ़ाया। आज सैकड़ो कमा रहा है। यह सुनकर नथ्थू भी पिगरी लोन के लिए फॉर्म भर देता है। वह खुश होकर घर लौटता है। पत्नी शान्ता से सारी बात बताता है। शान्ता पढ़ी-लिखी और समझदार थी। वह मैनेजर की दलितों को उनके पैतृक धंधे में ही बनाये रखने की साजिश को समझ जाती है। वह नथ्थू को बैंक से फॉर्म वापस लेने के लिए कहती है। गाँव में सभा बुलाकर दलित युवकों को पैतृक धंधे के अलावा दूसरे धंधों में न जाने देकर समाज की मूल धारा से अलग रखने की साजिश पर प्रकाश डालती हैं। सभी दलित युवक मिलकर बैंक के सामने धरना देते हैं। मैनेजर का कहना है कि "अगर ये अछूत अपना खानदानी धंधा बंद कर कोई नया धंधा करने लगेंगे, तो आनेवाली पीढ़ियाँ हमारे घरों की गन्दगी कैसे साफ़ करेंगी।"[3] मैनेजर की सोच वाकई इंसानियत को शर्मसार करनेवाली है। समाज, देश और दुनिया का विकास सबको साथ लेकर चलने से मुमकिन है। किसी को पीछे रखकर उसका फायदा उठाने से नहीं। शान्ता की होशियारी काबिलेतारीफ़ है। अपने हक के लिए खुद ही आवाज़ उठानी पड़ती है। जब सबने मिलकर धरना दिया तो मैनेजर को पिगरी लोन का फॉर्म वापिस लौटाना पडा। यही तो आज भी भारतीय समाज की विडंबना है कि जाति के आधार पर व्यक्ति की श्रेष्ठता और उसके कार्यो को तय किया जाता है।

इंदिरा परमार की कहानी 'वैतरणी' में विधायक काशीनाथ के बड़े भाई की एक्सीडेंट में मृत्यु हो गई थी। उन्हें अग्नि संस्कार के लिए श्मशान भूमि लाया गया था। वहाँ पर मुर्दा जलानेवालो को विधायक जी को देखकर उम्मीद होती है कि वे उनकी बरसो की समस्या का समाधान जरुर करेंगे। पानी की दिक्कत थी इसलिए चापाकल ठीक करवाने और श्मशानघाट की मरम्मत के लिए बिनती करते है। विधायक जी दरखास्त लेकर मिलने के लिए कहते हैं। कुछ दिनों बाद जब विधायक जी से मिलने गए तो विधायक जी यह बात भूल चुके थे। लेकिन फिर उन्हें याद आ जाता है और वह आश्वासन देते है कि कुछ न कुछ हो जायेगा। लेकिन कोई पक्की बात नहीं करते हैं। विधायक जी की पत्नी कुल पुरोहित को लेकर आती है। उनके आँगन में चापाकल लगवाने की बात करती है। पंडितजी का कहना था कि "पंडिताइन को दरवाजे पर जात-कुजात के बीच पानी भरने जाना पड़ता

है। एक चापाकल आपकी दया से लग जाता तो हम दोनों प्राणी जब तक जीते, असीसते।"[4] पंडित जी आशीर्वाद देते है कि बड़े भैया वैतरणी पार कर जायेंगे। अर्थात् बड़े भाई जो इस दुनिया को अलविदा कह चुके है वे अब वैतरणी पार कर जायेंगे। पुराणों के अनुसार वैतरणी यमलोक में एक नदी हैं। जिसे पार करना अत्यंत कठिन है। अब ये कैसे मुमकिन है कि धरती पर पंडित जी के आँगन में चापाकल लगवाया जाए और उनके आशीर्वाद से बड़े भैया वैतरणी पार कर लेंगे। क्योंकि सबको अपने-अपने कर्मो के अनुसार ही तो फल मिलता है। यहाँ सोचने की बात यह भी है कि पंडित जी की वैतरणी किस तरह पार होगी? शायद वे स्वयं जानते भी होंगे या नहीं।

कुसुम मेघवाल की कहानी 'अंगारा' में हरखू की बेटी जमुना खेत में काम कर रही थी। तब ठाकुर का बड़ा लड़का समर सिंह और उसका चाचा नाथू सिंह उसका अपहरण कर उसका बलात्कार करते हैं। कई दिनों तक सुनसान जगह पर एक विरान कोठरी में उसको बंद करके रखते है। एक दिन मौका पाकर वह कोठरी से भाग निकलती है। जब वह घर वापिस लौटती है तो सब घरवाले रोते हैं। आसपास के लोग व्यंग्यबाणों से उसे छल्ली करते हैं। उसका बड़ा भाई हीरा बहन के प्रति संवेदनशील है। वह बहन के बलात्कारी को सजा दिलवाना चाहता है। हीरा थाने में रिपोर्ट लिखवाने गया तो थानेदार पाँच सौ रुपये की मांग करता है। वह अपनी माँ के गले में पहनने का चांदी का जेवर गिरवी रखकर पैसे लेकर थाने जाता है। लेकिन कोई फायदा नहीं होता। क्योंकि समर सिंह थानेदार को भारी रकम रिश्वत में देकर मामला रफा-दफा करवा देता है। गाँव के लोगों को गवाही न देने के लिए धमकी दी जाती है। जमुना के साथ गलत हुआ। उसका अपहरण करके बलात्कार किया गया। वह अपनी जान बचाकर भाग आती है। स्वाभाविक है कि अपने परिवार के अलावा कहा जाएगी वह। लेकिन परिवार वाले तो पहले ही आँसू बहा रहे हैं। जैसे जमुना ने कोई पाप किया हो। आसपडोश के लोग भी उस पर ही व्यंग्य करते है। जब कि इस नफरत और व्यंग्यबाणों के हकदार ठाकुर का बड़ा लड़का समर सिंह और उसका चाचा नाथू सिंह है। जिन्होंने उस लड़की के साथ इतना बड़ा अपराध किया। लेकिन उनके सामने गाँववाले तो मजबूर है ही। पुलिस भी चूप्पी साधे हुए है। वैसे तो दलितों की परछाई से भी सवर्ण लोग दूर रहते हैं कि कहीं अपवित्र न हो जाए। लेकिन जमुना के साथ बलात्कार करते हुए शायद उन्हें ये खयाल नहीं आया। यही तो विडंबना है कि सही-गलत का फैसला अपने फायदे-नुरसान के आधार पर अपनी सोच के अनुसार ले लिया जाता है। ये फैसला लेने का अधिकार भी सिर्फ सवर्णो को ही हैं। यह स्थिति सोचनीय है।

## निष्कर्ष

मनुष्य होकर दूसरे मनुष्य के साथ पशुवत व्यवहार करना कहीं का न्याय नही हैं। जाति और धर्म के नाम पर जो व्यवहार किया जाता है उसमें बदलाव लाना अतिआवश्यक है। आज इक्कीसवीं सदी में भी ये बातें पुरानी नहीं है। नारायण राठौड़ जी ने सही कहा है कि "हम विकास के चाहे जितने दावे कर लें, लेकिन हम आज भी उसी मोड़ पर खड़े हैं, जहाँ अस्पृश्यता जैसी सामाजिक बुराई मुँह बाए खड़ी है।"[5] व्यक्ति की सोच में बदलाव होगा तभी सामाजिक सोच में भी बदलाव के लक्षण दिखाई देंगे। जब सोच मे बदलाव आयोगा तभी रवैये में भी बदलाव होगा।

**संदर्भ ग्रंथ सूची:**


1. नारायण राठौड़, सूरजपाल चौहान की कहानियों में दलित जीवन, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, 2007, पृ. सं. 18-19
2. सं. रमणिका गुप्ता, दलित कहानी संचयन, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, 2003, पृ.सं 24
3. वहीं, पृ.सं 68
4. वहीं, पृ.सं 115
5. नारायण राठौड़, सूरजपाल चौहान की कहानियों में दलित जीवन, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, 2007, पृ. सं. 6


**********